# रामचरित्मानस

## बालकाण्ड

चौपाई :

*** सुनि सिसु रुदन परम प्रिय बानी। संभ्रम चलि आईं सब रानी॥ हरषित जहँ तहँ धाईं दासी। आनँद मगन सकल पुरबासी॥1॥

भावार्थ:

-बच्चे के रोने की बहुत ही प्यारी ध्वनि सुनकर सब रानियाँ उतावली होकर दौड़ी चलीआईं। दासियाँ हर्षित होकर जहाँ-तहाँ दौड़ीं। सारे पुरवासी आनंद में मग्न हो गए॥1॥

*** दसरथ पुत्रजन्म सुनि काना। मानहु ब्रह्मानंद समाना॥ परम प्रेम मन पुलक सरीरा। चाहत उठन करत मति धीरा॥2॥

भावार्थ:

-राजा दशरथजी पुत्र का जन्म कानों से सुनकर मानो ब्रह्मानंद में समा गए। मन मेंअतिशय प्रेम है, शरीर पुलकित हो गया। (आनंद में अधीर हुई) बुद्धि को धीरज देकर (और प्रेम में शिथिल हुए शरीर को संभालकर) वे उठना चाहते हैं॥2॥

*** जाकर नाम सुनत सुभ होई। मोरें गृह आवा प्रभु सोई॥ परमानंद पूरि मन राजा। कहा बोलाइ बजावहु बाजा॥3॥

भावार्थ:

-जिनका नाम सुनने से ही कल्याण होता है, वही प्रभु मेरे घर आए हैं। (यह सोचकर) राजा का मन परम आनंद से पूर्ण हो गया। उन्होंने बाजे वालों को बुलाकर कहा कि बाजा बजाओ॥3॥

*** गुर बसिष्ठ कहँ गयउ हँकारा। आए द्विजन सहित नृपद्वारा॥ अनुपम बालक देखेन्हि जाई। रूप रासि गुन कहि न सिराई॥4॥

भावार्थ:

-गुरु वशिष्ठजी के पास बुलावा गया। वे ब्राह्मणों को साथ लिए राजद्वार पर आए। उन्होंने जाकर अनुपम बालक को देखा, जो रूप की राशि है और जिसके गुण कहने से समाप्त नहीं होते॥4॥

दोहा :

*** नंदीमुख सराध करि जातकरम सब कीन्ह। हाटक धेनु बसन मनि नृप बिप्रन्ह कहँ दीन्ह॥193॥

भावार्थ:

-फिर राजा ने नांदीमुख श्राद्ध करके सब जातकर्म-संस्कार आदि किए और ब्राह्मणों को सोना, गो, वस्त्र और मणियों का दान दिया॥193॥

चौपाई :

*** ध्वज पताक तोरन पुर छावा। कहि न जाइ जेहि भाँति बनावा॥ सुमनबृष्टि अकास तें होई। ब्रह्मानंद मगन सब लोई॥1॥

भावार्थ:

-ध्वजा, पताका और तोरणों से नगर छा गया। जिस प्रकार से वह सजाया गया, उसका तो वर्णन ही नहीं हो सकता। आकाश से फूलों की वर्षा हो रही है, सब लोग ब्रह्मानंद में मग्न हैं॥1॥

*** बृंद बृंद मिलि चलीं लोगाईं। सहज सिंगार किएँ उठि धाईं॥ कनक कलस मंगल भरि थारा। गावत पैठहिं भूप दुआरा॥2॥

भावार्थ:

-स्त्रियाँ झुंड की झुंड मिलकर चलीं। स्वाभाविक श्रृंगार किए ही वे उठ दौड़ीं। सोने का कलश लेकर और थालों में मंगल द्रव्य भरकर गाती हुईं राजद्वार में प्रवेश करती हैं॥2॥

*** करि आरति नेवछावरि करहीं। बार बार सिसु चरनन्हि परहीं॥ मागध सूत बंदिगन गायक। पावन गुन गावहिं रघुनायक॥3॥

भावार्थ:

-वे आरती करके निछावर करती हैं और बार-बार बच्चे के चरणों पर गिरती हैं। मागध, सूत, वन्दीजन और गवैये रघुकुल के स्वामी के पवित्र गुणों का गान करते हैं॥3॥

*** सर्बस दान दीन्ह सब काहू। जेहिं पावा राखा नहिं ताहू॥ मृगमद चंदन कुंकुम कीचा। मची सकल बीथिन्ह बिच बीचा॥4॥

भावार्थ:

-राजा ने सब किसी को भरपूर दान दिया। जिसने पाया उसने भी नहीं रखा (लुटा दिया)। (नगर की) सभी गलियों के बीच-बीच में कस्तूरी, चंदन और केसर की कीच मच गई॥4॥

दोहा :

*** गृह गृह बाज बधाव सुभ प्रगटे सुषमा कंद। हरषवंत सब जहँ तहँ नगर नारि नर बृंद॥194॥

भावार्थ:

-घर-घर मंगलमय बधावा बजने लगा, क्योंकि शोभा के मूल भगवान प्रकट हुए हैं। नगर केस्त्री-पुरुषों के झुंड के झुंड जहाँतहाँ आनंदमग्न हो रहे हैं॥194॥

चौपाई :

*** कैकयसुता सुमित्रा दोऊ। सुंदर सुत जनमत भैं ओऊ॥ वह सुख संपति समय समाजा। कहि

न सकइ सारद अहिराजा॥1॥

भावार्थ:

-कैकेयी और सुमित्रा- इन दोनों ने भी सुंदर पुत्रों को जन्म दिया। उस सुख सम्पत्ति, समय और समाज का वर्णन सरस्वती और सर्पों के राजा शेषजी भी नहीं कर सकते॥1॥

*** अवधपुरी सोहइ एहि भाँती। प्रभुहि मिलन आई जनु राती॥ देखि भानु जनु मन सकुचानी। तदपि बनी संध्या अनुमानी॥2॥

भावार्थ:

-अवधपुरी इस प्रकार सुशोभित हो रही है, मानो रात्रि प्रभु से मिलने आई हो और सूर्यको देखकर मानो मन में सकुचा गई हो, परन्तु फिर भी मन में विचार कर वह मानो संध्या बन (कर रह) गई हो॥2॥

*** अगर धूप बहु जनु अँधिआरी। उड़इ अबीर मनहुँ अरुनारी॥ मंदिर मनि समूह जनु तारा। नृप गृह कलस सो इंदु उदारा॥3॥

भावार्थ:

-अगर की धूप का बहुत सा धुआँ मानो (संध्या का) अंधकार है और जो अबीर उड़ रहा है, वह उसकी ललाई है। महलों में जो मणियों के समूह हैं, वे मानो तारागण हैं। राज महल का जो कलश है, वही मानो श्रेष्ठ चन्द्रमा है॥3॥

*** भवन बेदधुनि अति मृदु बानी। जनु खग मुखर समयँ जनु सानी॥ कौतुक देखि पतंग भुलाना। एक मास तेइँ जात न जाना॥4॥

भावार्थ:

-राजभवन में जो अति कोमल वाणी से वेदध्वनि हो रही है, वही मानो समय से (समयानुकूल) सनी हुई पक्षियों की चहचहाहट है। यह कौतुक देखकर सूर्य भी (अपनी चाल) भूल गए। एक महीना उन्होंने जाता हुआ न जाना (अर्थात उन्हें एक महीना वहीं बीत गया)॥4॥

दोहा :

*** मास दिवस कर दिवस भा मरम न जानइ कोइ। रथ समेत रबि थाकेउ निसा कवन बिधि होइ॥195॥

भावार्थ:

- महीने भर का दिन हो गया। इस रहस्य को कोई नहीं जानता। सूर्य अपने रथ सहित वहीं रुक गए, फिर रात किस तरह होती॥195॥

चौपाई :

*** यह रहस्य काहूँ नहिं जाना। दिनमनि चले करत गुनगाना॥ देखि महोत्सव सुर मुनि नागा। चले भवन बरनत निज भागा॥1॥

भावार्थ:

-यह रहस्य किसी ने नहीं जाना। सूर्यदेव (भगवान श्री रामजी का) गुणगान करते हुए चले। यह महोत्सव देखकर देवता, मुनि और नाग अपने भाग्य की सराहना करते हुए अपने-अपने घर चले॥1॥

*** औरउ एक कहउँ निज चोरी। सुनु गिरिजा अति दृढ़ मति तोरी॥ काकभुसुंडि संग हम दोऊ। मनुजरूप जानइ नहिं कोऊ॥2॥

भावार्थ:

-हे पार्वती! तुम्हारी बुद्धि (श्री रामजी के चरणों में) बहुत दृढ़ है, इसलिए मैं और भी अपनी एक चोरी (छिपाव) की बात कहता हूँ, सुनो। काकभुशुण्डि और मैं दोनों वहाँ साथ-साथ थे, परन्तु मनुष्य रूप में होने के कारण हमें कोई जान न सका॥2॥

*** परमानंद प्रेम सुख फूले। बीथिन्ह फिरहिं मगन मन भूले॥ यह सुभ चरित जान पै सोई। कृपा राम कै जापर होई॥3॥

भावार्थ:

-परम आनंद और प्रेम के सुख में फूले हुए हम दोनों मगन मन से (मस्त हुए) गलियों में (तन-मन की सुधि) भूले हुए फिरते थे, परन्तु यह शुभ चरित्र वही जान सकता है, जिस पर श्री रामजी की कृपा हो॥3॥

*** तेहि अवसर जो जेहि बिधि आवा। दीन्ह भूप जो जेहि मन भावा॥ गज रथ तुरग हेम गो हीरा। दीन्हे नृप नानाबिधि चीरा॥4॥

भावार्थ:

-उस अवसर पर जो जिस प्रकार आया और जिसके मन को जो अच्छा लगा, राजा ने उसे वही दिया। हाथी, रथ, घोड़े, सोना, गायें, हीरे और भाँति-भाँति के वस्त्र राजा ने दिए॥4॥

दोहा :

*** मन संतोषे सबन्हि के जहँ तहँ देहिं असीस। सकल तनय चिर जीवहुँ तुलसिदास के ईस॥196॥

भावार्थ:

-राजा ने सबके मन को संतुष्ट किया। (इसी से) सब लोग जहाँ-तहाँ आशीर्वाद दे रहे थे कि तुलसीदास के स्वामी सब पुत्र (चारों राजकुमार) चिरजीवी (दीर्घायु) हों॥196॥

चौपाई :

*** कछुक दिवस बीते एहि भाँती। जात न जानिअ दिन अरु राती॥ नामकरन कर अवसरु जानी। भूप बोलि पठए मुनि ग्यानी॥1॥

भावार्थ:

-इस प्रकार कुछ दिन बीत गए। दिन और रात जाते हुए जान नहीं पड़ते। तब नामकरणसंस्कार का समय जानकर राजा ने ज्ञानी मुनि श्री वशिष्ठजी को बुला भेजा॥1॥

*** करि पूजा भूपति अस भाषा। धरिअ नाम जो मुनि गुनि राखा॥ इन्ह के नाम अनेक अनूपा। मैं नृप कहब स्वमति अनुरूपा॥2॥

भावार्थ:

-मुनि की पूजा करके राजा ने कहा- हे मुनि! आपने मन में जो विचार रखे हों, वे नाम रखिए। (मुनि ने कहा-) हे राजन्! इनके अनुपम नाम हैं, फिर भी मैं अपनी बुद्धि के अनुसार कहूँगा॥2॥

***जो आनंद सिंधु सुखरासी। सीकर तें त्रैलोक सुपासी॥ सो सुखधाम राम अस नामा। अखिल लोक दायक बिश्रामा॥3॥

भावार्थ:

-ये जो आनंद के समुद्र और सुख की राशि हैं, जिस (आनंदसिंधु) के एक कण से तीनों लोक सुखी होते हैं, उन (आपके सबसे बड़े पुत्र) का नाम 'राम' है, जो सुख का भवन और सम्पूर्ण लोकों को शांति देने वाला है॥3॥

*** बिस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई॥ जाके सुमिरन तें रिपु नासा। नाम सत्रुहन बेद प्रकासा॥4॥

भावार्थ:

-जो संसार का भरण-पोषण करते हैं, उन (आपके दूसरे पुत्र) का नाम 'भरत' होगा, जिनके स्मरण मात्र से शत्रु का नाश होता है, उनका वेदों में प्रसिद्ध 'शत्रुघ्न' नाम है॥4॥

दोहा :

*** लच्छन धाम राम प्रिय सकल जगत आधार। गुरु बसिष्ठ तेहि राखा लछिमन नाम उदार॥197॥

भावार्थ:

-जो शुभ लक्षणों के धाम, श्री रामजी के प्यारे और सारे जगत के आधार हैं, गुरु वशिष्ठजी ने उनका 'लक्ष्मण' ऐसा श्रेष्ठ नाम रखा है॥197॥

चौपाई :

*** धरे नाम गुर हृदयँ बिचारी। बेद तत्व नृप तव सुत चारी॥ मुनिधन जन सरबस सिव प्राना। बाल केलि रस तेहिं सुख माना॥1॥

भावार्थ:

-गुरुजी ने हृदय में विचार कर ये नाम रखे (और कहा-) हे राजन्! तुम्हारे चारों पुत्र वेद के तत्त्व (साक्षात् परात्पर भगवान) हैं। जो मुनियों के धन, भक्तों के सर्वस्व और शिवजी के प्राण हैं, उन्होंने (इस समय तुम लोगों के प्रेमवश) बाल लीला के रस में सुख माना है॥1॥

*** बारेहि ते निज हित पति जानी। लछिमन राम चरन रति मानी॥ भरत सत्रुहन दूनउ भाई। प्रभु सेवक जसि प्रीति बड़ाई॥2॥

भावार्थ:

-बचपन से ही श्री रामचन्द्रजी को अपना परम हितैषी स्वामी जानकर लक्ष्मणजी ने उनके चरणों में प्रीति जोड़ ली। भरत और शत्रुघ्न दोनों भाइयों में स्वामी और सेवक की जिस प्रीति की प्रशंसा है, वैसी प्रीति हो गई॥2॥

***स्याम गौर सुंदर दोउ जोरी। निरखहिं छबि जननीं तृन तोरी॥ चारिउ सील रूप गुन धामा। तदपि अधिक सुखसागर रामा॥3॥

भावार्थ:

-श्याम और गौर शरीर वाली दोनों सुंदर जोड़ियों की शोभा को देखकर माताएँ तृण तोड़ती हैं (जिसमें दीठ न लग जाए)। यों तो चारों ही पुत्र शील, रूप और गुण के धाम हैं, तो भी सुख के समुद्र श्री रामचन्द्रजी सबसे अधिक हैं॥3॥

*** हृदयँ अनुग्रह इंदु प्रकासा। सूचत किरन मनोहर हासा॥ कबहुँ उछंग कबहुँ बर पलना। मातु दुलारइ कहि प्रिय ललना॥4॥

भावार्थ:

-उनके हृदय में कृपा रूपी चन्द्रमा प्रकाशित है। उनकी मन को हरने वाली हँसी उस (कृपा रूपी चन्द्रमा) की किरणों को सूचित करती है। कभी गोद में (लेकर) और कभी उत्तम पालने में (लिटाकर) माता 'प्यारे ललना!' कहकर दुलार करती है॥4॥

दोहा :

*** ब्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन बिगत बिनोद। सो अज प्रेम भगति बस कौसल्या कें गोद॥198॥

भावार्थ:

-जो सर्वव्यापक, निरंजन (मायारहित), निर्गुण, विनोदरहित और अजन्मे ब्रह्म हैं, वही प्रेम और भक्ति के वश कौसल्याजी की गोद में (खेल रहे) हैं॥198॥

चौपाई :

*** काम कोटि छबि स्याम सरीरा। नील कंज बारिद गंभीरा॥ नअरुन चरन पंकज नख जोती। कमल दलन्हि बैठे जनु मोती॥1॥

भावार्थ:

-उनके नीलकमल और गंभीर (जल से भरे हुए) मेघ के समान श्याम शरीर में करोड़ों कामदेवों की शोभा है। लाल-लाल चरण कमलों के नखों की (शुभ्र) ज्योति ऐसी मालूम होती है जैसे (लाल) कमल के पत्तों पर मोती स्थिर हो गए हों॥1॥

*** रेख कुलिस ध्वज अंकुस सोहे। नूपुर धुनि सुनि मुनि मन मोहे॥ कटि किंकिनी उदर त्रय रेखा। नाभि गभीर जान जेहिं देखा॥2॥

भावार्थ:

-(चरणतलों में) वज्र, ध्वजा और अंकुश के चिह्न शोभित हैं। नूपुर (पेंजनी) की ध्वनि सुनकर मुनियों का भी मन मोहित हो जाता है। कमर में करधनी और पेट पर तीन रेखाएँ (त्रिवली) हैं। नाभि की गंभीरता को तो वही जानते हैं, जिन्होंने उसे देखा है॥2॥

*** भुज बिसाल भूषन जुत भूरी। हियँ हरि नख अति सोभा रूरी॥ उर मनिहार पदिक की सोभा। बिप्र चरन देखत मन लोभा॥3॥

भावार्थ:

-बहुत से आभूषणों से सुशोभित विशाल भुजाएँ हैं। हृदय पर बाघ के नख की बहुत ही निराली छटा है। छाती पर रत्नों से युक्त मणियों के हार की शोभा और ब्राह्मण (भृगु) के चरण चिह्न को देखते ही मन लुभा जाता है॥3॥

*** कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई। आनन अमित मदन छबि छाई॥ दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे। नासा तिलक को बरनै पारे॥4॥

भावार्थ:

-कंठ शंख के समान (उतार-चढ़ाव वाला, तीन रेखाओं से सुशोभित) है और ठोड़ी बहुत ही सुंदर है। मुख पर असंख्य कामदेवों की छटा छा रही है। दो-दो सुंदर दँतुलियाँ हैं, लाल-लाल होठ हैं। नासिका और तिलक (के सौंदर्य) का तो वर्णन ही कौन कर सकता है॥4॥

*** सुंदर श्रवन सुचारु कपोला। अति प्रिय मधुर तोतरे बोला॥ चिक्कन कच कुंचित गभुआरे। बहु प्रकार रचि मातु सँवारे॥5॥

भावार्थ:

-सुंदर कान और बहुत ही सुंदर गाल हैं। मधुर तोतले शब्द बहुत ही प्यारे लगते हैं। जन्म के समय से रखे हुए चिकने और घुँघराले बाल हैं जिनको माता ने बहुत प्रकार से बनाकर सँवार दिया है॥5॥

*** पीत झगुलिआ तनु पहिराई। जानु पानि बिचरनि मोहि भाई॥ रूप सकहिं नहिं कहि श्रुति सेषा। सो जानइ सपनेहुँ जेहिं देखा॥6॥

भावार्थ:

-शरीर पर पीली झँगुली पहनाई हुई है। उनका घुटनों और हाथों के बल चलना मुझे बहुत ही प्यारा लगता है। उनके रूप का वर्णन वेद और शेषजी भी नहीं कर सकते। उसे वही जानता है, जिसने कभी स्वप्न में भी देखा हो॥6॥

दोहा :

*** सुख संदोह मोह पर ग्यान गिरा गोतीत। दंपति परम प्रेम बस कर सिसुचरित पुनीत॥199॥
भावार्थ:
-जो सुख के पुंज, मोह से परे तथा ज्ञान, वाणी और इन्द्रियों से अतीत हैं, वे भगवान दशरथ-कौसल्या के अत्यन्त प्रेम के वश होकर पवित्र बाललीला करते हैं॥199॥
चौपाई :
*** एहि बिधि राम जगत पितु माता। कोसलपुर बासिन्ह सुखदाता॥ जिन्ह रघुनाथ चरन रति मानी। तिन्ह की यह गति प्रगट भवानी॥1॥
भावार्थ:
-इस प्रकार (सम्पूर्ण) जगत के माता-पिता श्री रामजी अवधपुर के निवासियों को सुख देते हैं, जिन्होंने श्री रामचन्द्रजी के चरणों में प्रीति जोड़ी है, हे भवानी! उनकी यह प्रत्यक्ष गति है (कि भगवान उनके प्रेमवश बाललीला करके उन्हें आनंद दे रहे हैं)॥1॥
*** रघुपति बिमुख जतन कर कोरी। कवन सकइ भव बंधन छोरी॥ जीव चराचर बस कै राखे। सो माया प्रभु सों भय भाखे॥2॥
भावार्थ:
-श्री रघुनाथजी से विमुख रहकर मनुष्य चाहे करोड़ों उपाय करे परन्तु उसका संसार बंधन कौन छुड़ा सकता है। जिसने सब चराचर जीवों को अपने वश में कर रखा है, वह माया भी प्रभु से भय खाती है॥2॥
*** भृकुटि बिलास नचावइ ताही। अस प्रभु छाड़ि भजिअ कहु काही॥ मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई। भजत कृपा करिहहिं रघुराई॥3॥
भावार्थ:
-भगवान उस माया को भौंह के इशारे पर नचाते हैं। ऐसे प्रभु को छोड़कर कहो, (और) किसका भजन किया जाए। मन, वचन और कर्म से चतुराई छोड़कर भजते ही श्री रघुनाथजी कृपा करेंगे॥3॥
*** एहि बिधि सिसुबिनोद प्रभु कीन्हा। सकल नगरबासिन्ह सुख दीन्हा॥ लै उछंग कबहुँक हलरावै। कबहुँ पालने घालि झुलावै॥4॥
भावार्थ:
-इस प्रकार से प्रभु श्री रामचन्द्रजी ने बालक्रीड़ा की और समस्त नगर निवासियों को सुख दिया। कौसल्याजी कभी उन्हें गोद में लेकर हिलाती-डुलाती और कभी पालने में लिटाकर झुलाती थीं॥4॥
दोहा :
*** प्रेम मगन कौसल्या निसि दिन जात न जान। सुत सनेह बस माता बालचरित कर गान॥200॥
भावार्थ:

-प्रेम में मग्न कौसल्याजी रात और दिन का बीतना नहीं जानती थीं। पुत्र के स्नेहवश माता उनके बालचरित्रों का गान किया करतीं॥200॥

चौपाई :

*** एक बार जननीं अन्हवाए। करि सिंगार पलनाँ पौढ़ाए॥ निज कुल इष्टदेव भगवाना। पूजा हेतु कीन्ह अस्नाना॥1॥

भावार्थ:

-एक बार माता ने श्री रामचन्द्रजी को स्नान कराया और श्रृंगार करके पालने पर पौढ़ा दिया। फिर अपने कुल के इष्टदेव भगवान की पूजा के लिए स्नान किया॥1॥

*** करि पूजा नैबेद्य चढ़ावा। आपु गई जहँ पाक बनावा॥ बहुरि मातु तहवाँ चलि आई। भोजन करत देख सुत जाई॥2॥

भावार्थ:

-पूजा करके नैवेद्य चढ़ाया और स्वयं वहाँ गईं, जहाँ रसोई बनाई गई थी। फिर माता वहीं (पूजा के स्थान में) लौट आई और वहाँ आने पर पुत्र को (इष्टदेव भगवान के लिए चढ़ाए हुए नैवेद्य का) भोजन करते देखा॥2॥

*** गै जननी सिसु पहिं भयभीता। देखा बाल तहाँ पुनि सूता॥ बहुरि आइ देखा सुत सोई। हृदयँ कंप मन धीर न होई॥3।

भावार्थ:

-माता भयभीत होकर (पालने में सोया था, यहाँ किसने लाकर बैठा दिया, इस बात से डरकर) पुत्र के पास गई, तो वहाँ बालक को सोया हुआ देखा। फिर (पूजा स्थान में लौटकर) देखा कि वही पुत्र वहाँ (भोजन कर रहा) है। उनके हृदय में कम्प होने लगा और मन को धीरज नहीं होता॥3॥

*** इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा। मतिभ्रम मोर कि आन बिसेषा॥ देखि राम जननी अकुलानी। प्रभु हँसि दीन्ह मधुर मुसुकानी॥4॥

भावार्थ:

-(वह सोचने लगी कि) यहाँ और वहाँ मैंने दो बालक देखे। यह मेरी बुद्धि का भ्रम है या और कोई विशेष कारण है? प्रभु श्री रामचन्द्रजी माता को घबड़ाई हुई देखकर मधुरमुस्कान से हँस दिए॥4॥

दोहा :

*** देखरावा मातहि निज अद्भुत रूप अखंड। रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मंड॥201॥

भावार्थ:

-फिर उन्होंने माता को अपना अखंड अद्भुत रूप दिखलाया, जिसके एक-एक रोम में करोड़ों ब्रह्माण्ड लगे हुए हैं॥201॥

चौपाई :

*** अगनित रबि ससि सिव चतुरानन। बहु गिरि सरित सिंधु महि कानन॥ काल कर्म गुन ग्यान सुभाऊ। सोउ देखा जो सुना न काऊ॥1॥

भावार्थ:

-अगणित सूर्य, चन्द्रमा, शिव, ब्रह्मा, बहुत से पर्वत, नदियाँ, समुद्र, पृथ्वी, वन, काल, कर्म, गुण, ज्ञान और स्वभाव देखे और वे पदार्थ भी देखे जो कभी सुने भी न थे॥1॥

*** देखी माया सब बिधि गाढ़ी। अति सभीत जोरें कर ठाढ़ी॥ देखा जीव नचावइ जाही। देखी भगति जो छोरइ ताही॥2॥

भावार्थ:

-सब प्रकार से बलवती माया को देखा कि वह (भगवान के सामने) अत्यन्त भयभीत हाथ जोड़े खड़ी है। जीव को देखा, जिसे वह माया नचाती है और (फिर) भक्ति को देखा, जो उस जीव को (माया से) छुड़ा देती है॥2॥

*** तन पुलकित मुख बचन न आवा। नयन मूदि चरननि सिरु नावा॥ बिसमयवंत देखि महतारी। भए बहुरि सिसुरूप खरारी॥3॥

भावार्थ:

-(माता का) शरीर पुलकित हो गया, मुख से वचन नहीं निकलता। तब आँखें मूँदकर उसने श्री रामचन्द्रजी के चरणों में सिर नवाया। माता को आश्चर्यचकित देखकर खर के शत्रु श्री रामजी फिर बाल रूप हो गए॥3॥

*** अस्तुति करि न जाइ भय माना। जगत पिता मैं सुत करि जाना॥ हरि जननी बहुबिधि समुझाई। यह जनि कतहुँ कहसि सुनु माई॥4॥

भावार्थ:

-(माता से) स्तुति भी नहीं की जाती। वह डर गई कि मैंने जगत्पिता परमात्मा को पुत्र करके जाना। श्री हरि ने माता को बहुत प्रकार से समझाया (और कहा-) हे माता! सुनो, यह बात कहीं पर कहना नहीं॥4॥

दोहा :

*** बार बार कौसल्या बिनय करइ कर जोरि। अब जनि कबहूँ ब्यापै प्रभु मोहि माया तोरि॥202॥

भावार्थ:

-कौसल्याजी बार-बार हाथ जोड़कर विनय करती हैं कि हे प्रभो! मुझे आपकी माया अब कभी न व्यापे॥202॥

चौपाई :

*** बालचरित हरि बहुबिधि कीन्हा। अति अनंद दासन्ह कहँ दीन्हा॥ कछुक काल बीतें सब भाई।

बड़े भए परिजन सुखदाई॥1॥

भावार्थ:

-भगवान ने बहुत प्रकार से बाललीलाएँ कीं और अपने सेवकों को अत्यन्त आनंद दिया। कुछ समय बीतने पर चारों भाई बड़े होकर कुटुम्बियों को सुख देने वाले हुए॥1॥

*** चूड़ाकरन कीन्ह गुरु जाई। बिप्रन्ह पुनि दछिना बहु पाई॥ परम मनोहर चरित अपारा। करत फिरत चारिउ सुकुमारा॥2॥

भावार्थ:

-तब गुरुजी ने जाकर चूड़ाकर्म-संस्कार किया। ब्राह्मणों ने फिर बहुत सी दक्षिणापाई। चारों सुंदर राजकुमार बड़े ही मनोहर अपार चरित्र करते फिरते हैं॥2॥

*** मन क्रम बचन अगोचर जोई। दसरथ अजिर बिचर प्रभु सोई॥ भोजन करत बोल जब राजा। नहिं आवत तजि बाल समाजा॥3॥

भावार्थ:

-जो मन, वचन और कर्म से अगोचर हैं, वही प्रभु दशरथजी के आँगन में विचर रहे हैं। भोजन करने के समय जब राजा बुलाते हैं, तब वे अपने बाल सखाओं के समाज को छोड़कर नहीं आते॥3॥

*** कौसल्या जब बोलन जाई। ठुमुकु ठुमुकु प्रभु चलहिं पराई॥ निगम नेति सिव अंत न पावा। ताहि धरै जननी हठि धावा॥4॥

भावार्थ:

-कौसल्या जब बुलाने जाती हैं, तब प्रभु ठुमुक-ठुमुक भाग चलते हैं। जिनका वेद 'नेति' (इतना ही नहीं) कहकर निरूपण करते हैं और शिवजी ने जिनका अन्त नहीं पाया, माता उन्हें हठपूर्वक पकड़ने के लिए दौड़ती हैं॥4॥

*** धूसर धूरि भरें तनु आए। भूपति बिहसि गोद बैठाए॥5॥।

भावार्थ:

-वे शरीर में धूल लपेटे हुए आए और राजा नेहँसकर उन्हें गोद में बैठा लिया॥5॥

दोहा :

***भोजन करत चपल चित इत उत अवसरु पाइ। भाजि चले किलकत मुख दधि ओदन लपटाइ॥203॥

भावार्थ:

-भोजन करते हैं, पर चित चंचल है। अवसर पाकर मुँह में दही-भात लपटाए किलकारी मारते हुए इधर-उधर भाग चले॥203॥

चौपाई :

*** बालचरित अति सरल सुहाए। सारद सेष संभु श्रुति गाए॥ जिन्ह कर मन इन्ह सन नहिं राता। ते जन बंचित किए बिधाता॥1॥

भावार्थ:

-श्री रामचन्द्रजी की बहुत ही सरल (भोली) और सुंदर (मनभावनी) बाललीलाओं का सरस्वती, शेषजी, शिवजी और वेदों ने गान किया है। जिनका मन इन लीलाओं में अनुरक्त नहीं हुआ, विधाता ने उन मनुष्यों को वंचित कर दिया (नितांत भाग्यहीन बनाया)॥1॥

*** भए कुमार जबहिं सब भ्राता। दीन्ह जनेऊ गुरु पितु माता॥ गुरगृहँ गए पढ़न रघुराई। अलप काल बिद्या सब आई॥2॥

भावार्थ:

-ज्यों ही सब भाई कुमारावस्था के हुए, त्यों ही गुरु, पिता और माता ने उनका यज्ञोपवीत संस्कार कर दिया। श्री रघुनाथजी (भाइयों सहित) गुरु के घर में विद्या पढ़ने गए और थोड़े ही समय में उनको सब विद्याएँ आ गईं॥2॥

*** जाकी सहज स्वास श्रुति चारी। सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी॥ बिद्या बिनय निपुन गुन सीला। खेलहिंखेल सकल नृपलीला॥3॥

भावार्थ:

-चारों वेद जिनके स्वाभाविक श्वास हैं, वे भगवान पढ़ें, यह बड़ा कौतुक (अचरज) है। चारों भाई विद्या, विनय, गुण और शील में (बड़े) निपुण हैं और सब राजाओं की लीलाओं के ही खेल खेलते हैं॥3॥

*** करतल बान धनुष अति सोहा। देखत रूप चराचर मोहा॥ जिन्ह बीथिन्ह बिहरहिं सब भाई। थकित होहिं सब लोग लुगाई॥4॥

भावार्थ:

-हाथों में बाण और धनुष बहुत ही शोभा देते हैं। रूप देखते ही चराचर (जड़-चेतन) मोहित हो जाते हैं। वे सब भाई जिन गलियों में खेलते (हुए निकलते) हैं, उन गलियों के सभी स्त्री-पुरुष उनको देखकर स्नेह से शिथिल हो जाते हैं अथवा ठिठककर रह जाते हैं॥4॥

दोहा :

*** कोसलपुर बासी नर नारि बृद्ध अरु बाल। प्रानहु ते प्रिय लागत सब कहुँ राम कृपाल॥204॥

भावार्थ:

-कोसलपुर के रहने वाले स्त्री, पुरुष, बूढ़े और बालक सभी को कृपालु श्री रामचन्द्रजी प्राणों से भी बढ़कर प्रिय लगते हैं॥204॥

चौपाई :

*** बंधु सखा सँग लेहिं बोलाई। बन मृगया नित खेलहिं जाई॥ पावन मृग मारहिं जियँ जानी।

दिन प्रति नृपहि देखावहिं आनी॥1॥
भावार्थ:
-श्री रामचन्द्रजी भाइयों और इष्ट मित्रों को बुलाकर साथ ले लेते हैं और नित्य वन में जाकर शिकार खेलते हैं। मन में पवित्र समझकर मृगों को मारते हैं और प्रतिदिन लाकर राजा (दशरथजी) को दिखलाते हैं॥1॥
*** जे मृग राम बान के मारे। ते तनु तजि सुरलोक सिधारे॥ अनुज सखा सँग भोजन करहीं। मातु पिता अग्या अनुसरहीं॥2॥
भावार्थ:
-जो मृग श्री रामजी के बाण से मारे जाते थे, वे शरीर छोड़कर देवलोक को चले जाते थे। श्री रामचन्द्रजी अपने छोटे भाइयों और सखाओं के साथ भोजन करते हैं और माता-पिता की आज्ञा का पालन करते हैं॥2॥
*** जेहि बिधि सुखी होहिं पुर लोगा। करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा॥ बेद पुरान सुनहिं मन लाई। आपु कहहिं अनुजन्ह समुझाई॥3॥
भावार्थ:
-जिस प्रकार नगर के लोग सुखी हों, कृपानिधान श्री रामचन्द्रजी वही संयोग (लीला) करते हैं। वे मन लगाकर वेद-पुराण सुनते हैं और फिर स्वयं छोटे भाइयों कोसमझाकर कहते हैं॥3॥
*** प्रातकाल उठि कै रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा॥ आयसु मागि करहिं पुर काजा। देखि चरित हरषइ मन राजा॥4॥
भभावार्थ:
-श्री रघुनाथजी प्रातःकाल उठकर माता-पिता और गुरु को मस्तक नवाते हैं और आज्ञा लेकर नगर का काम करते हैं। उनके चरित्र देख-देखकर राजा मन में बड़े हर्षित होते हैं॥4॥ **अगला पेज..**.

# रामचरित्मानस

## बालकाण्ड